Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 1 | Issue 3 | (Jul – Sep 2025)

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी की भूमिका और स्वतंत्रता की चेतना: एक आलोचनात्मक समीक्षा

सौरभ सिंह
शोध छात्र (पीएच.डी.), हिन्दी विभाग, जी.ए. कॉलेज, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

प्रस्तावना

राजेन्द्र यादव हिंदी साहित्य के एक ऐसे सशक्त रचनाकार हैं, जिन्होंने कथा साहित्य को न केवल नई दृष्टि दी, बल्कि सामाजिक चेतना को भी गहराई से झकझोरा। उनका जन्म 28 अगस्त 1929 को उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद में हुआ था। उन्होंने न केवल लेखक के रूप में, बल्कि 'हंस' पत्रिका के संपादक के रूप में भी साहित्यिक जगत में गहरी छाप छोड़ी। राजेन्द्र यादव का लेखन समाज के हाशिए पर खड़े व्यक्ति की पीड़ा, संघर्ष और अस्मिता को स्वर देता है। वे नई कहानी आंदोलन के प्रमुख स्तंभों में गिने जाते हैं और उनके उपन्यासों में व्यक्ति की मानसिक उलझनें, सामाजिक जड़ताओं के विरुद्ध विद्रोह और यथास्थिति को तोड़ने की तीव्र आकांक्षा दिखाई देती है। हिंदी साहित्य में उनका योगदान बहुआयामी है। एक ओर उन्होंने परंपरागत लेखन से हटकर नए विषयों को उठाया, वहीं दूसरी ओर उन्होंने साहित्य में सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता और वैचारिक स्वतंत्रता जैसे मुद्दों को गंभीरता से प्रस्तुत किया। उनके उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन के संघर्ष, पारिवारिक टूटन, युवा पीढ़ी की बेचैनी और विशेष रूप से स्त्री की स्थिति का विश्लेषण मिलता है। उनका लेखन सामाजिक यथार्थ से जुड़ा हुआ है और उसमें स्त्री के आत्मसम्मान और स्वतंत्रता की गूंज स्पष्ट सुनाई देती है।

बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में हिंदी साहित्य में नारी विमर्श एक सशक्त आंदोलन के रूप में उभरा। स्त्री की पारंपरिक छवि को तोड़ते हुए साहित्य में उसकी स्वतंत्र सोच, निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक अन्याय के प्रति विरोध को स्वर देने का प्रयास हुआ। इसी विमर्श को आगे बढ़ाते हुए राजेन्द्र यादव ने अपने उपन्यासों में स्त्री पात्रों को केवल सहनशील या कोमल रूप में नहीं, बल्कि चेतनासंपन्न, विद्रोही और संघर्षशील रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने स्त्री को एक व्यक्ति के रूप में देखा, जिसकी अपनी इच्छाएं, आकांक्षाएं और निर्णय होते हैं।

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी विषयक चेतना महज कहानी का एक भाग नहीं, बल्कि उसकी मूल आत्मा है। उनकी स्त्रियाँ अपने अस्तित्व की तलाश में हैं, वे सामाजिक बंधनों से मुक्ति चाहती हैं और पितृसत्ता द्वारा थोपे गए नियमों का प्रतिकार करती हैं। इन उपन्यासों में नारी की स्वतंत्रता केवल सामाजिक या आर्थिक नहीं, बल्कि मानसिक और वैचारिक स्तर पर देखी जाती है। यही चेतना उन्हें हिंदी साहित्य में नारी विमर्श के प्रमुख रचनाकारों में स्थापित करती है।

आज के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में जब स्त्री की अस्मिता, सुरक्षा और स्वतंत्रता जैसे प्रश्न फिर से केंद्रीय मुद्दे बन रहे हैं, तब राजेन्द्र यादव का साहित्य और अधिक प्रासंगिक हो जाता है। उनके उपन्यासों के माध्यम से यह शोध यह समझने का प्रयास करेगा कि उन्होंने नारी पात्रों के माध्यम से स्वतंत्रता की चेतना को कैसे प्रस्तुत किया, और यह चेतना किस हद तक सामाजिक संरचना को प्रभावित करती है। इस अध्ययन का उद्देश्य न केवल राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी

की भूमिका को समझना है, बल्कि यह भी देखना है कि उनका लेखन समकालीन नारी विमर्श को किस प्रकार दिशा देता है।

अनुसंधान की आवश्यकता और उद्देश्य

हिंदी साहित्य में नारी स्वतंत्रता विषयक चर्चा एक लंबे समय से चली आ रही बहस का हिस्सा रही है, जो सामाजिक परिवर्तन और स्त्री की चेतना के विकास के साथ निरंतर बदलती रही है। प्रारंभिक काल में स्त्री पात्रों को करुणा और त्याग की मूर्ति के रूप में चित्रित किया गया, परंतु बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में यह दृष्टिकोण बदला और स्त्री एक स्वतंत्र, आत्मचेतस और निर्णयक्षम व्यक्ति के रूप में साहित्य में उभरी। इस बदलाव को स्थापित करने में जिन लेखकों की भूमिका रही, उनमें राजेन्द्र यादव का नाम प्रमुख है। उन्होंने स्त्री को केवल पुरुष-प्रधान समाज की परछाई न मानकर, उसकी एक स्वतंत्र सत्ता के रूप में चित्रित किया।

राजेन्द्र यादव की दृष्टि में स्त्री वह व्यक्ति है जो अपनी इच्छाओं, सपनों और अस्मिता के लिए समाज से संघर्ष करती है। उनके उपन्यासों में स्त्रियाँ महज़ घरेलू किरदार नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक ढांचे से टकराने वाली जागरूक इकाइयाँ हैं, जो अपने अस्तित्व की खोज में संलग्न हैं। वे स्त्री को एक परंपरागत ढांचे में नहीं बांधते, बल्कि उसके मानसिक, वैचारिक और यथार्थवादी संघर्षों को अभिव्यक्ति देते हैं। राजेन्द्र यादव की नायिकाएँ विद्रोही हैं, आत्मनिर्णय के प्रति सजग हैं और सामाजिक बंधनों को चुनौती देने का साहस रखती हैं।

इस शोध की आवश्यकता इस कारण है कि राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी पात्रों की भूमिका न केवल कथा की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि वे सामाजिक विमर्श और नारी मुक्ति आंदोलन के दस्तावेज भी बन जाते हैं। आज के बदलते सामाजिक संदर्भ में स्त्री के अधिकार, स्वतंत्रता और अस्तित्व जैसे प्रश्न पुनः केंद्र में आ गए हैं, ऐसे में राजेन्द्र यादव का साहित्य इन प्रश्नों को समझने और विश्लेषित करने के लिए एक उपयुक्त माध्यम प्रस्तुत करता है।

इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह है कि राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी पात्रों के माध्यम से स्वतंत्रता की चेतना को किस प्रकार अभिव्यक्त किया गया है, इसका विश्लेषण किया जा सके। साथ ही यह देखा जा सके कि सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में स्त्री की भूमिका किस प्रकार प्रस्तुत की गई है और उसका समाज से संबंध किस रूप में स्थापित होता है। इसके अतिरिक्त, यह भी परीक्षण करना आवश्यक है कि किस प्रकार आधुनिकता, विद्रोह और आत्मनिर्णय की भावना राजेन्द्र यादव की स्त्री पात्रों में परिलक्षित होती है। ये सभी उद्देश्य इस शोध को नारी विमर्श की एक नई दृष्टि प्रदान करने की दिशा में मार्गदर्शन करते हैं।

शोध की सीमा

इस शोध का क्षेत्र स्पष्ट रूप से सीमित है, जिससे अध्ययन की गहनता और प्रासंगिकता सुनिश्चित हो सके। शोध केवल राजेन्द्र यादव के उन उपन्यासों पर केंद्रित रहेगा, जिनमें नारी पात्रों की भूमिका और स्वतंत्रता की चेतना विशेष रूप से उभरकर सामने आती है। इसके अंतर्गत मुख्य रूप से तीन उपन्यासों – सारा आकाश, उखड़े हुए लोग और शह और मात – का चयन किया गया है। ये तीनों रचनाएँ न केवल राजेन्द्र यादव के साहित्यिक विकास की द्योतक हैं, बल्कि सामाजिक बदलाव, पारिवारिक तनाव और स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलता को उजागर करने में भी सक्षम हैं।

इन उपन्यासों के माध्यम से लेखक ने मध्यवर्गीय समाज की उस परत को उघाड़ा है, जहाँ स्त्री आज़ादी की आकांक्षा तो रखती है, लेकिन परंपराओं और सामाजिक बंधनों में जकड़ी होती है। शोध में इस पहलू को सीमित कालखंड के अंतर्गत देखा जाएगा, जिसमें मुख्य रूप से बीसवीं सदी के उत्तरार्ध का सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश केंद्र में रहेगा। यह वह समय था जब भारत में आधुनिकता और पारंपरिकता के बीच तीव्र संघर्ष चल रहा था और स्त्रियाँ स्वयं के अस्तित्व को पुनर्परिभाषित करने का प्रयास कर रही थीं।

शोध की सीमा को स्पष्ट करने का उद्देश्य यह है कि विश्लेषण अत्यधिक व्यापक न होकर गहराईपूर्ण हो। उपन्यासों में चित्रित सामाजिक यथार्थ, स्त्री की भूमिका और स्वतंत्रता की चेतना को उस विशिष्ट समय और परिवेश के संदर्भ में समझा जाएगा, जिसमें वे रचनाएँ जन्मी थीं। इस सीमा के अंतर्गत किए गए अध्ययन से यह अपेक्षा की जाती है कि वह राजेन्द्र यादव के लेखन में नारी विमर्श की सूक्ष्मताओं को प्रभावी ढंग से उद्घाटित कर सकेगा।

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी चित्रण

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी चित्रण एक गहरे सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर उभरकर सामने आता है। उन्होंने स्त्री को केवल परंपरागत भूमिकाओं में बाँधकर प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि उसे एक स्वतंत्र विचारशील व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है। उनके साहित्य में पारंपरिक और आधुनिक स्त्री के बीच का द्वंद्व बार-बार उभरता है। पारंपरिक स्त्री जहाँ आज्ञाकारिता, त्याग और सहनशीलता की प्रतीक है, वहीं आधुनिक स्त्री अपने अधिकारों के प्रति सजग, आत्मनिर्भर और विद्रोही है। यह द्वंद्व केवल बाह्य स्तर पर नहीं बल्कि आंतरिक स्तर पर भी स्पष्ट दिखाई देता है, जहाँ स्त्री अपनी पुरानी पहचान से बाहर निकलकर एक नई पहचान गढ़ने का प्रयास करती है।

राजेन्द्र यादव की नायिकाएँ केवल घरेलू दायरे तक सीमित नहीं हैं। वे घर की चारदीवारी में रहकर भी समाज से संवाद करती हैं और सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देती हैं। सारा आकाश की नायिका शीला एक साधारण घरेलू जीवन जीने वाली स्त्री प्रतीत होती है, लेकिन उसके मौन और व्यवहार के माध्यम से उसका असंतोष और आकांक्षा बार-बार उभरती है। इसी प्रकार उखड़े हुए लोग और शह और मात की स्त्रियाँ अपने संबंधों, सामाजिक स्थितियों और मानसिक बोझ से जूझती हुई दिखाई देती हैं। वे केवल पत्नी, बहू या बेटी की भूमिका में बंधी नहीं हैं, बल्कि इन पारंपरिक भूमिकाओं के बाहर जाकर अपने अस्तित्व को पहचानने की कोशिश करती हैं।

इन स्त्रियों के भीतर एक सतत मानसिक द्वंद्व चलता रहता है। वे सामाजिक अपेक्षाओं और अपनी निजी इच्छाओं के बीच झूलती रहती हैं। उनकी आकांक्षाएं सीमित नहीं हैं; वे प्रेम, शिक्षा, आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान की तलाश करती हैं। यह संघर्ष उन्हें असंतोष की स्थिति में ले आता है, जहाँ वे अपनी परिस्थितियों से असहमति जताती हैं, विद्रोह करती हैं या कभी-कभी चुप रहकर भी गहरी प्रतिक्रिया देती हैं।

राजेन्द्र यादव की नारी पात्रों में आत्म-चेतना का बोध विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे अपने निर्णय स्वयं लेने की इच्छा रखती हैं, भले ही उन्हें इसके लिए समाज या परिवार का विरोध क्यों न सहना पड़े। यह आत्म-चेतना ही उनके चरित्र को विशिष्ट बनाती है और उन्हें साहित्य में एक नई पहचान दिलाती है। उनके उपन्यासों की स्त्रियाँ न तो पूरी तरह विद्रोही हैं और न ही पूर्णतः समर्पिता; वे बीच की उस स्थिति में हैं जहाँ वे जागरूक हैं, जूझ रही हैं और धीरे-धीरे अपनी चेतना के साथ आगे बढ़ रही हैं। यही द्वंद्व और जागरूकता उन्हें हिंदी कथा साहित्य में एक अलग स्थान प्रदान करती है।

स्वतंत्रता की चेतना

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में स्वतंत्रता की चेतना एक केंद्रीय तत्व के रूप में उपस्थित है, विशेषतः स्त्री पात्रों के संदर्भ में। लेखक का दृष्टिकोण स्त्री स्वतंत्रता के प्रति केवल सहानुभूतिपूर्ण नहीं, बल्कि स्पष्ट रूप से पक्षधरता का है। उन्होंने अपने साहित्य में स्त्री को परंपरा से बंधी एक मूक प्राणी नहीं माना, बल्कि एक ऐसे व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है, जो अपनी स्वतंत्र पहचान और अस्तित्व के लिए संघर्षरत है। उनकी स्त्रियाँ चुपचाप सहने वाली नहीं, बल्कि सोचने, समझने, निर्णय लेने और विरोध करने वाली हैं।

राजेन्द्र यादव की नायिकाएँ आत्मनिर्भरता की आकांक्षा रखती हैं। वे शिक्षा को केवल ज्ञान प्राप्ति का माध्यम नहीं, बल्कि स्वतंत्रता का आधार मानती हैं। उनके लिए प्रेम भी एक स्वतंत्र चुनाव का विषय है, न कि सामाजिक या पारिवारिक व्यवस्था का परिणाम। उनकी रचनाओं में प्रेम संबंध पारंपरिक बंधनों को तोड़ते हैं और स्त्री की स्वायत्तता को रेखांकित करते हैं। सारा आकाश में शीला का मौन विद्रोह, शह और मात की नायिका की भावनात्मक स्वतंत्रता, इन सबमें स्त्री की अपनी इच्छा और निर्णय लेने की क्षमता स्पष्ट होती है।

लेखक ने स्त्रियों के विरोध, विद्रोह और असहमति को केवल एक भावनात्मक प्रतिक्रिया के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे एक वैचारिक चेतना के रूप में प्रस्तुत किया है। स्त्रियाँ कभी अपने मौन से, कभी अपने निर्णयों से, तो कभी सीधे विरोध कर यह स्पष्ट करती हैं कि वे अब पारंपरिक सामाजिक भूमिकाओं को चुपचाप स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। यह विद्रोह व्यक्तिगत स्तर पर शुरू होता है, लेकिन उसके पीछे सामाजिक व्यवस्था के प्रति असहमति छिपी होती है।

राजेन्द्र यादव की स्त्रियाँ पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष करती हैं, और यह संघर्ष केवल किसी पुरुष पात्र से नहीं, बल्कि उस समूची सामाजिक संरचना से है जो स्त्री को दोयम दर्जे का समझती है। वे विवाह, परिवार, मर्यादा, नैतिकता जैसे संस्थानों की जाँच करती हैं और उनसे जुड़े स्त्री विरोधी तत्वों को अस्वीकार करती हैं। इस संघर्ष में वे टूटती भी हैं, लेकिन झुकती नहीं। उनका यह संघर्ष न केवल व्यक्तिगत मुक्ति की ओर बढ़ता है, बल्कि वह सामूहिक चेतना का रूप भी लेता है।

आलोचना और विमर्श

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों का मूल्यांकन स्त्रीवादी दृष्टिकोण से किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि उनके लेखन में स्त्री केवल कथा की एक सहायक पात्र नहीं, बल्कि विचारधारा की संवाहक के रूप में उपस्थित होती है। स्त्रीवादियों की दृष्टि में राजेन्द्र यादव का लेखन कई मायनों में साहसिक और संवेदनशील है, क्योंकि उन्होंने स्त्री को उसकी अस्मिता, स्वायत्तता और वैचारिक स्वतंत्रता के साथ चित्रित करने का प्रयास किया है। हालांकि, कुछ आलोचक यह भी मानते हैं कि उनका दृष्टिकोण पूरी तरह स्त्री-केंद्रित नहीं होकर कभी-कभी पुरुष दृष्टिकोण से प्रभावित प्रतीत होता है, फिर भी यह निर्विवाद है कि उन्होंने हिंदी साहित्य में स्त्री को विमर्श का केंद्र अवश्य बनाया।

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ और कथा-शिल्प के बीच गहरा सामंजस्य दिखाई देता है। उन्होंने समाज की जटिलताओं, स्त्री की दोहरी स्थिति, पारिवारिक तनाव और मानसिक संघर्षों को जिस सहजता से कथा के ताने-बाने में बुना है, वह उनके लेखन की विशिष्टता है। उनकी भाषा सरल होते हुए भी प्रभावशाली है, जो पात्रों की

मनोस्थिति और सामाजिक दबावों को प्रभावी ढंग से व्यक्त करती है। उन्होंने कथानक को जटिल बनाए बिना गंभीर विषयों को उठाया, जिससे पाठक पात्रों के संघर्ष से तादात्म्य स्थापित कर सके।

राजेन्द्र यादव के पात्रों की विश्वसनीयता भी उनके लेखन की एक बड़ी विशेषता है। उनके स्त्री पात्र किसी आदर्श या प्रतीक नहीं, बल्कि वास्तविक जीवन से जुड़े हुए, जटिल और बहुआयामी चरित्र हैं। वे अपनी कमजोरियों, इच्छाओं, असंतोष और विरोधों के साथ सजीव रूप में उपस्थित होती हैं। इन पात्रों की विचारधारा कभी-कभी अस्पष्ट भी लगती है, परंतु वह उनके यथार्थ और स्वाभाविक मानवीय व्यवहार का हिस्सा है। उनका संघर्ष उन्हें अधिक प्रामाणिक और पाठक के लिए स्वीकार्य बनाता है।

आलोचकों ने राजेन्द्र यादव के लेखन को मिश्रित प्रतिक्रियाएं दी हैं। कुछ आलोचकों ने उन्हें 'नए समय का सच' लिखने वाला लेखक कहा है, जबकि कुछ ने उनके स्त्री पात्रों को पुरुष मानसिकता से संचालित माना है। फिर भी, अधिकांश समीक्षाएँ इस बात पर सहमत हैं कि उन्होंने हिंदी उपन्यास को नई दिशा दी और नारी विमर्श को साहित्यिक मुख्यधारा में स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी रचनाओं पर किए गए स्त्रीवादी अध्ययन यह दर्शाते हैं कि भले ही दृष्टिकोण पूर्णतः स्त्रीवादी न हो, लेकिन स्त्री की चेतना और उसकी जटिलताओं को उन्होंने जिस गहराई से छुआ है, वह हिंदी साहित्य में एक उल्लेखनीय योगदान है।

निष्कर्ष

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी पात्रों की भूमिका महज कथा को आगे बढ़ाने तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वे स्वयं कथानक की धुरी बन जाती हैं। ये स्त्रियाँ पारंपरिक सामाजिक ढांचे में जकड़ी हुई होने के बावजूद अपने भीतर परिवर्तन की चेतना संजोए हुए हैं। वे संघर्षशील हैं, आत्माभिव्यक्ति की आकांक्षी हैं और अपने अधिकारों तथा इच्छाओं के प्रति सजग हैं। उनके मानसिक द्वंद्व, असहमति और कभी-कभी मौन विरोध इस बात का संकेत हैं कि वे एक नई सामाजिक पहचान की तलाश में हैं। राजेन्द्र यादव ने नारी पात्रों को जिस मानवीय गहराई के साथ प्रस्तुत किया है, वह उन्हें हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करता है।

उनके साहित्य में स्त्री स्वतंत्रता की चेतना न केवल विषय के रूप में बल्कि विचार के स्तर पर भी प्रमुख रूप से उपस्थित है। यह चेतना केवल बाहरी विरोध या विद्रोह तक सीमित नहीं, बल्कि स्त्री के अंतर्मन में चल रहे संघर्ष को भी दर्शाती है। आत्मनिर्भरता, शिक्षा और प्रेम के माध्यम से स्त्रियाँ अपनी पहचान गढ़ने का प्रयास करती हैं। हालांकि इस स्वतंत्रता की एक सीमा भी स्पष्ट होती है — सामाजिक संरचनाएँ, पारिवारिक दायित्व और पितृसत्तात्मक दबाव स्त्री की मुक्ति की राह में बाधाएँ बनकर खड़ी रहती हैं। इसके बावजूद, इन सीमाओं के भीतर भी स्त्री की आत्म-चेतना विकसित होती है और यही प्रक्रिया स्वतंत्रता की चेतना को गहराई प्रदान करती है।

राजेन्द्र यादव का योगदान समकालीन हिंदी साहित्य में विशेष रूप से नारी विमर्श के संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने स्त्री की भूमिका को नए ढंग से परिभाषित किया और उसे साहित्यिक विमर्श का केंद्रीय विषय बनाया। उनके उपन्यासों ने नारी की जटिलताओं, आकांक्षाओं और संघर्षों को सामाजिक यथार्थ से जोड़कर प्रस्तुत किया, जिससे हिंदी उपन्यास परंपरा को नई दिशा मिली।

भविष्य में इस विषय पर शोध की कई संभावनाएँ हैं। उनके अन्य लेखन — जैसे लघु कहानियाँ, निबंध, तथा 'हंस' पत्रिका में प्रकाशित स्त्री संबंधी लेख — इस विमर्श को और व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने का अवसर प्रदान करते हैं।

साथ ही, उनके स्त्री पात्रों की तुलना अन्य समकालीन लेखकों की नायिकाओं से की जा सकती है, जिससे हिंदी साहित्य में स्त्री चेतना के विभिन्न आयामों की गहन समझ विकसित की जा सकती है। इस प्रकार, राजेन्द्र यादव का लेखन न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और स्त्री स्वातंत्र्य की चेतना को उभारने में भी एक सशक्त माध्यम सिद्ध होता है।

ग्रंथ सूची

1. यादव, राजेन्द्र। सारा आकाश। राजकमल प्रकाशन, 1959।
2. यादव, राजेन्द्र। उखड़े हुए लोग। राजकमल प्रकाशन, 1966।
3. यादव, राजेन्द्र। शह और मात। राजकमल प्रकाशन, 1970।
4. यादव, राजेन्द्र। अपने-अपने अजनबी। राजकमल प्रकाशन, 1994।
5. यादव, राजेन्द्र। हंस (संपादकीय लेख) – विभिन्न अंकों में स्त्री मुद्दों पर विशेष लेखन।
1. कुमार, नामवर। नई कहानी की भूमिका। राजकमल प्रकाशन।
2. शुक्ल, रामचंद्र। हिंदी साहित्य का इतिहास।
3. मिश्र, प्रभाकर। राजेन्द्र यादव की कथा-दृष्टि।
4. राय, प्रभात। हिंदी उपन्यास और सामाजिक यथार्थ।
5. वर्मा, मधुरेश। नई कहानी का समाजशास्त्र।
1. हंस – विशेषांक: नारी विमर्श पर केंद्रित।
2. आलोचना – हिंदी साहित्य की प्रमुख आलोचनात्मक पत्रिका।
3. समकालीन भारतीय साहित्य – नारी विषयक लेखों की दृष्टि से उपयोगी।
4. विश्वविद्यालय स्तर पर प्रस्तुत शोध प्रबंध – जैसे "राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में स्त्री विमर्श" (एम.ए./पीएच.डी. स्तर)।
5. इंडियन जर्नल ऑफ जेंडर स्टडीज – लिंग विमर्श पर आधुनिक शोध लेख।
1. दास, वीणा। स्त्री विमर्श: एक सामाजिक परिप्रेक्ष्य।
2. चौधरी, शोभा। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श।
3. घोष, सुनीता। नारीवादी आलोचना के सिद्धांत।
4. सिंघ, कुमुद। हिंदी उपन्यास और स्त्री चेतना।
5. मिश्रा, चंद्रकांता। स्त्री का दूसरा पक्ष: भारतीय संदर्भ में।